संस्थापित १८६७ ई०

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२३ ● अंक १६ ● १७ अप्रैल २०१८, बैसाख शुक्ल पक्ष प्रथम/द्वितीया संवत् २०७५ ● दयानन्दाब्द १६४ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११६

हम सच्चे आर्य बनें

–डॉ० धीरज सिंह आर्य, सभा प्रधान

आज मानवता का सर्वत्र क्षरण हो रहा है दानवता अपना विकराल रूप धारण कर रही है। कहीं कोई भी सुरक्षित अनुभव नहीं कर रहा है। कहीं धर्म के नेता का आवरण ओढ़ लोग धर्म के नाम पर लोगों को ठग रहे हैं तो कहीं राजनीतिक नेता देशोन्नति के उपायों को नजरंदाज करके अपने वोट बैंक को मजबूत बनाने के लिए अपनी राजनीतिक प्रतिभा का प्रयोग कर रहे हैं। देश को समृद्ध बनाने की योजना ध्वस्त होती जा रही है। राजनेता अपने वक्तव्य राष्ट्र निर्माणकारी भावना से रहित केवल पार्टीबन्दी की भावना से ही देने में संलग्न रहते हैं।

राजनीति राष्ट्र को सुसमृद्ध बनाने के स्वरूप का मार्गदर्शन देने की नीति है परन्तु उसका प्रयोग सही रूप में नहीं किया जा रहा है। छल छद्म किसी भी प्रकार अपनी सत्ता पाने व बनाने के रूप में उसका प्रयोग किया जा रहा है।

महर्षि दयानन्द ने देश के पराधीनता के मूल में नारी उत्पीड़न उसकी उपेक्षा, अशिक्षा, जाति पाति को भेद ढोंग पाखण्ड को पाया था जिसके कारण राष्ट्र छिन्न–भिन्न हो रहा था। पराधीनता के त्रास को भोग रहा था। उन्होंने इस सभी से रहित पूर्ण सुखी समृद्ध भारत बनाने की भावना से आर्य समाज की स्थापना करके उसे आन्दोलन नाम दिया था और कहा था कि यह आन्दोलन निरन्तर चलते रहना चाहिए तभी सभी विकारों से हमें मुक्ति मिल सकेगी। हम स्वतंत्र हो सकेंगे, नारी समुचित सम्मान पायेगी, सुशिक्षित होगी और सन्तानों का निर्माण कर सकेगी। धर्म का सच्चा रूप जन–जन की समझ में आयेगा। ढोंग पाखण्ड हमें हानि न पहुंचा सकेंगे। आन्दोलन तीव्रगति से चला हम स्वतंत्र हुये परन्तु शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजों की दासवृत्ति बनाने वाली ही चलायी जाती रही इससे आज हम स्वतंत्र कहे जाने के बावजूद पूरी तरह से परतंत्र है। हमें पराधीनता की वृत्ति ही रास आ रही है। हमें भारतीय संस्कृति भारतीय सभ्यता के प्रति अरूचि सी हो रही है। उसे दकियानूसीपन कहा जाने लगा। प्रोग्रेसिव कहलाने के लिए विदेशी मानसिकता का ही प्रसार किया जा रहा है, इसी से आज देश विघटन के कगार पर है, बाहरी दुश्मन हमारे देश की सत्ता को हथियाने के लिए छल छद्म साम दाम दण्ड भेद का प्रयोग कर रहे हैं तो आन्तरिक शत्रु अन्दर से उन्हें विविधा रूपों में सहयोगी बनकर राष्ट्र को तोड़ने में व्यस्त हैं।

ऐसी अवस्था में हमें गम्भीर चिन्तन करते हुए आर्य समाज आन्दोलन को तीव्रता से चलाने का संकल्प लेना है। हम आर्य बनकर ही मानवता के मूल को समझाने में समर्थ हो सकेंगे। आर्यों के अन्दर स्वार्थ परता नहीं होती, वह सत्य व धर्म की रक्षा के लिए सदैव बलिदान देने को तत्पर रहता है। ऐसे विचारों वाले ही आर्य कहे जाते हैं उनका समाज ही आर्य समाज कहा जाता है। हम सभी आर्य समाज के सदस्य बड़ी गम्भीरता से देश की समस्याओं पर चिन्तन करें और उन समस्याओं से मुक्त राष्ट्र बनाने के लिए आर्य समाज आन्दोलन की तीव्र गति से चलाने का संकल्प लें।

अपने जीवन में यदि कहीं कुछ आलस्य या प्रमाद व शिथिलता आयी है तो उसे दूर करने का संकल्प लें। सच्चे आर्य बनें, और अपनी संगठन शक्ति के आन्दोलन को तीव्र करने में लगायें। निश्चय ही हमारे ऐसे प्रयत्न से देश में फैलते विकार नष्ट होंगे। आर्यत्व का मानवता का प्रसार व संरक्षण होगा और सुख समृद्धि से पूर्ण राष्ट्र के नागरिक बनकर विश्व को मार्ग दर्शन देने में समर्थ बनेगें।

वेदामृतम्

अदिते मित्र वरुणोत मळ", यद्वो वयं चकृमा कच्चिदागः"। उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र", मानोदीर्धा अभिनशन् तमिस्त्राः।
। ऋग् २.२७.१४

मैं आज देवों को पुकार रहा हूँ। हे अदिति! हे मित्र! हे वरुण! हे इन्द्र! तुम हमें दुःख-पारावारसे निकालकर सुखी करो। कभी खण्डित होनेवाली, अजर-अमर बनी रहने वाली जगन्माता अदिति है। 'मित्र' मन है, 'वरुण' प्राण है, 'इन्द्र' जीवात्मा है। इसके प्रति हम अपने जीवन में अनेक अपराध करते हैं। जगन्माता अदिति ने जो वेदोपदेश दिये हैं, और मनुष्य के लिए जो नैतिक नियम निर्धारित किये हैं, उन्हें हम भंग करते हैं। मन-रूप मित्र जो शुभ संकल्प करता है, उसकी हम उपेक्षा करते हैं। प्राण-रूप वरुण जिस पद्धति से शरी को चलाना चाहता है, उसके प्रतिकूल चलकर हम उसमें बाधा उपस्थित करते हैं। आत्मा-रूप इन्द्र की अर्न्तवाणी को अनसुना कर हम उसके प्रति भी अपराध करते हैं। सामाजिक दृष्टि से अदिति राष्ट्रभूमि है, यतः वह अच्छेद्य, अभेद्य एवं अखण्डनीय होती है। 'मित्र' सर्वभूत-मैत्री का प्रसारक विद्वान् ब्राह्मण है। 'वरुण' शत्रुओं को पाशों में बांधने वाला सेनापति है। 'इन्द्र' राजा है।

हम यदि राष्ट्रभूमि के साथ विद्रोह या विश्वासघात करते हैं, राष्ट्र के विद्वान ब्राह्मण का अपमान करते हैं या उनके मैत्री के सन्देश को खण्डित करते हैं, लुके-छिपे शत्रु-पक्ष की सहायता कर सेनापति के कार्य में विघ्न उपस्थित करते हैं, राजनियमों को भंग कर राज-विद्रोह करते हैं, तो हमारा यह सब कार्य-कलाप राष्ट्रीय या सामाजिक देवों के प्रति अपराध है। उपर्युक्त समस्त, आध्यत्मिक और राष्ट्रीय देव हमारे अपराधों के व्यसन से हमें मुक्त कराकर हमें सुखरी करें। हे इन्द्र! हे आत्मन्! हे राजन्! हमपर ऐसा अनुग्रह करो कि हस विस्तीर्ण निर्भय ज्योति को प्राप्त करें। हमारे जीवन में जो निराशा, असफलता, उत्साहहीनता, चिर-उदासीनता आदि की तमःपूर्ण निशाएं कभी-कभी आ जाती है, उनमें हम उद्धार पा जाएं, और हम अपने जीवन को आशा, सफलता, उत्साह, स्फूर्ति एवं कर्मण्यता से ओत-प्रोत बनाकर संसार-समर में सद विजयी होते रहें।

अन्तरंग अधिवेशन सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०, लखनऊ के सभी पदाधिकारियों, प्रतिष्ठित, सहायुक्त एवं अन्तरंग सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०, लखनऊ की अन्तरंग सभा का साधारण अधिवेशन दिनांक–२२ अप्रैल, २०१८ दिन–रविवार (बैसाख शुक्ल सप्तमी) को प्रातः ११.०० बजे से आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०, नारायण स्वामी भवन, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ में संस्था के प्रधान/का०प्रधान– डॉ० धीरज सिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न होगी, जिसमें आपकी उपस्थिति प्रार्थनीय है।

एजेण्डा एवं विस्तृत विषयों की रूप–रेखा सभी को डाक द्वारा भेज दी गई है। कृपया समय से उपस्थित होकर अधिवेशन को सफल बनाये।

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
सभा मन्त्री

डॉ. धीरज सिंह
प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

प्लास्टिक हमारे स्वास्थ्य को हानि पहुंचा रहा है।

कभी–कभी जब आवारा गायों के पेट से प्लास्टिक निकलने की खबरें आती हैं, तब या तो हम उन लोगों को कोसते हैं, जो अपना कूड़ा प्लास्टिक की थैलियों में डालकर फेंक देते हैं या फिर उस व्यवस्था को, जो गायों को आवारा इधर–उधर खाने के लिए छोड़ देती है। नए शोध बताते हैं कि प्लास्टिक सिर्फ गाय जैसे आवारा पशुओं के पेट में ही नहीं जा रहा, हमारे जैसे उन लोगों के पेट में भी जा रहा है, जो साफ–सफाई से खाना पसंद करते हैं। ब्रिटेन में हैरियट–वॉट यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने पाया है कि हर बार जब हम खाना खाने बैठते हैं, भोजन के साथ हमारे पेट में प्लास्टिक के सौ से ज्यादा सूक्ष्म कण पहुंच जाते हैं। इन शोधकर्ताओं ने एक बार प्रयोगशाला में इस्तेमाल होने वाली पेट्री डिश में ऐसे कण देखे, तो उन्होंने सोचा कि भोजन की थाली में ऐसे कितने कण शोधकर्ताओं ने गणना की, तो पता चला कि एक पेट्र डिश में अगर प्लास्टिक के २० कण होते हैं, तो भोजन की बड़ी थाली में औसतन ११४ कण।

इन शोधकर्ताओं ने जब इस गणना को आगे बढ़ाया, तो वे इस नतीजे पर पहुंचे कि ब्रिटेन में एक व्यक्ति हर साल औसतन ६८,४१५ प्लास्टिक के सूक्ष्म कण निगल जाता है। अगर इस गणना को और आगे बढ़ाया जाए, तो पता चलेगा कि हम अपने शरीर की हर मांसपेशी के लिए प्लास्टिक के दो सूक्ष्मकण हर साल निगल जाते हैं। वैसे पिछले दिनों एक खबर यह भी आई थी कि समुद्री जीवों के शरीर में इतना प्लास्टिक हो गया कि जो लोग सी–फूड खाते हैं, वह उनके शरीर में भी पहुंच जाता है।

ऐसा नहीं कि प्लास्टिक के कण सिर्फ भोजन के जरिए ही हमारे शरीर में पहुंचते हैं। प्लास्टिक के ये सूक्ष्म कण हमारे वातावरण में हर जगह पहुंच गए हैं, इसलिए जब हम सांस लेते हैं, तो वे हमारे फेफड़ों में भी जा विराजते हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि हमारे घरों में जो धूल होती है, उसमें प्लास्टिक के यक कण बहुयायत में होते हैं। प्लास्टिक के ये कण कहीं से भी आ सकते हैं। वे हमारी दरी या कालीन में इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक के भी हो सकते हैं, कार–टायर के भी हो सकते हैं, पैकेजिंग के भी हो सकते हैं, हमारी कुरसी, सोफे, यहां तक कि हमारे कपड़ों के भी हो सकते हैं, हम उन्हें देख नहीं पाते, लेकिन वे हमारी खुराक का नियमित हिस्सा बन चुके हैं।

प्लास्टिक के ये नन्हें कण हमारे शरीर, हमारी सेहत को क्या नुकसान पहुंचाते हैं, यह अभी ठीक से नहीं पता, लेकिन एक बात स्पष्ट है कि हमारा पूरा शरीर और उसका पूरा रसायनशास्त्र प्रकृति से मिलने वाले कार्बनिक पदार्थों को खाने–पचाने के लिए ही बना है। इसलिए यह उम्मीद तो नहीं ही है कि प्लास्टिक के ये कण शरीर में पहुंचकर कोई अच्छी भूमिका निभाते होंगे। और समस्या सिर्फ प्लास्टिक की नहीं है, हमने तरह–तरह के सिंथेटिक डिटर्जेंट और रसायन बनाए हैं, जिन्हें हम हर रोज इस्तेमाल करते हैं और उनके अंश भी हमारे शरीर में नियमित रूप से पहुंच रहे हैं। दुर्भाग्य से शरीर पर इनके प्रभाव का भी अभी ठीक से शोध नहीं हो सका है। हमें नहीं पता कि ये हमें कौन सी बीमारी देते हैं और हमारी किन परेशानियों का कारण बनते हैं? यह ऐसा मामला है, जिसका समाधान सिर्फ प्लास्टिक की थैलियों का इस्तेमाल बंद कर देने से भी नहीं निकलने वाला।

– सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ षष्ठ समुल्लासारम्भः

अथ राजधर्मान् वक्ष्यामः

सब सेना और सेनापतियों के ऊपर राज्याधिकार, दण्ड देने की व्यवस्था के सब कार्यों का आधिपत्य और सब के ऊपर वर्त्तमान सर्वाधीश राज्याधिकार इन चारों अधिकारों में सम्पूर्ण वेद शास्त्रों में प्रवीण पूर्ण विद्यावाले धर्मात्मा जितेन्द्रिय सुशील जनों को स्थापित करना चाहिए अर्थात् मुख्य सेनापति, मुख्य राज्याधिकारी, मुख्य न्यायाधीश, प्रधान और राजा ये चार सब विद्याओं में पूर्ण विद्वान् होने चाहियें।।१।।

न्यून से न्यून दश विद्वानों अथवा बहुत न्यून हों तो तीन विद्वानों की सभा जैसी व्यवस्था करे उस धर्म अर्थात् व्यवस्था का उल्लंघ कोई भी न करे।।२।।

इस सभा में चारों वेद, हैतुक अर्थात् कारण अकारण का ज्ञाता न्यायशास्त्र, निरूक्त, धर्मशास्त्र आदि के वेत्ता विक्षन् सभासद् हों परन्तु वे ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ हों तब यह सभा कि जिसमें दश विद्वानों से न्यून न होने चाहिए।।३।।

और जिस सभा में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद के जानने वाले तीन सभासद् होके व्यवस्था करें उस सभा की हुई व्यवस्था को भी कोई उल्लंघन न करे।।४।।

यदि एक अकेला सब वेदों का जाननेहारा द्विजों में उत्तम संन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे वही श्रेष्ठ धर्म है क्योंकि अज्ञानियों के सहस्त्रों लाखों क्रोड़ों मिल के जो कुछ व्यवस्था करें उस को कभी न मानना चाहिए।।५।।

जो ब्रह्मचर्य सत्यभाषणादि व्रत वेदविद्या वा विचार से रहित जन्ममात्र से शूद्रवत् वर्त्तमान हैं उन सहस्त्रों मनुष्यों के मिलने से भी सभा नहीं कहाती।।६।।

जो अविद्यायुक्त मूर्ख वेदों के न जानने वाले मनुष्य जिस धर्म को कहें उस को कभी न मानना चाहिए क्योंकि जो मूर्खों के कहे हुए धर्म के अनुसार चलते हैं उनके पीछे सैकड़ों प्रकार के पाप लग जाते हैं।।७।।

इसलिये तीनों अर्थात् विद्यासभा, धर्मसभा और राज्य सभाओं में मूर्खों को कभी भरती न करे। किन्तु सदा विद्वान् और धार्मिक पुरूषों का स्थापन करे। और सब लोग ऐसे–

त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिं च शाश्वतीम्। आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वार्त्तारम्भाँश्च लोकतः।।१।।
इन्द्रियाणां जये योगं समातिष्ठेद्दिवानिशम्। जितेन्द्रियो हि शक्नोति वशे स्थापयितुं प्रजाः।।२।।
दश कामसमुत्थानि तथाष्टौ क्रोधजानि च। व्यसनानि दुरन्तानि प्रयत्नेन विवर्जयेत्।।३।।
कामजेषु प्रसक्तो हि व्सनेषु महीपतिः। विजुज्यतेऽर्थधर्माभ्यां क्रोधजेष्वात्मनैव तु।।४।।
मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परीवादः स्त्रियो मदः। तौर्य्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः।।५।।
पैशुन्यं साहसं द्रोह ईर्ष्यासूयार्थदूषणम्। वाग्दण्डजं च पारूष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः।।६।।
द्वयोरप्येतयोर्मूलं यं सर्वे कवयो विदुः। तं यत्नेन जयेल्लोभं तज्यावेतावुभौ गणौ।।७।।
पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम्। एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे।।८।।
दण्डस्य पातनं चैव वाक्पारूष्यार्थदूषणे। क्रोधजेऽपि गणे विद्यात्कष्टमेतत्त्रिकं सदा।९।।
सप्तकस्यास्य वर्गस्य सर्वत्रैवानुषङ्गिणः। व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते।१०।।
व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यात्यव्यसनी मृतः।११।। मनु०।।

राजा और राजसभा के सभासद् तब हो सकते हैं कि जब वे चारों वेदों की कर्मोपासना ज्ञान विद्याओं के जानने वालों से तीनों विद्या सनातन दण्डनीति न्यायविद्या आत्मविद्या अर्थात् परमात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव रूप को यथावत् जानने रूप ब्रह्मविद्या और लोक से वार्ताओं का आरम्भ (कहना और पूछना) सीखकर सभासद् वा सभापति हो सकें।।१।।

सब सभासद और सभापति इन्द्रियों को जीतने अर्थात् अपने वश में रख के सदा धर्म में वर्तें और अधर्म से हठे हटाए रहैं। इसलिये रात दिन नियत समय में योगाभ्यास भी करते रहैं, क्योंकि जो अजितेन्द्रिय कि अपनी इन्द्रियों (जो मन, प्राण और शरीर प्रजा है इस) को जीते बिना बाहर की प्रजा को अपने वश में स्थापना करने को समर्थ कभी नहीं हो सकता।।२।।

दृढ़ोत्साही होकर जो काम से दश और क्रोध से आठ दुष्ट व्यसन कि जिनमें फंसा हुआ मनुष्य कठिनता से निकल सके उन को प्रयत्न से छोड़ और छुड़ा देवे।।३।।

क्योंकि जो राजा काम से उत्पन्न हुए दश दुष्ट व्यसनों में फंसता है वह अर्थ अर्थात् राज्य धनादि और धर्म से रिहत हो जाता है और जो क्रोध से उत्पन्न हुए आठ बुरे व्यसनों में फसता है वह शरीर से भी रहित हो जाता है।।४।।

काम से उत्पन्न हुए व्सन गिनाते हैं, देखो-मृगया खेलना, (अक्ष) अर्थात् चोपड़ा खेलना, जुआ खेलनादि, दिन में सोना, कामकथा व दूसरे की निन्दा किया करना, स्त्रियों का अति संग, मादक द्रव्य अर्थात् मद्य, अफीम, भांग, गांजा, चरस आदि का सेवन, गाना, बजाना, नाचना वा नाच कराना सुनना और देखना, वृथा इधर-उधर घूमते रहना ये दश कामोत्पन्न व्यसन हैं।।५।।

क्रोध से उत्पन्न व्यसनों को गिनाते हैं- 'पैशुन्यम्' अर्थात् चुगली करना, साहस बिना विचारे बलात्कार से किसी की स्त्री से बुरा काम करना, द्रोह-द्रोह रखन, 'ईर्ष्या' अर्थात् दूसरे की बढ़ाई वा उन्नति देखकर जला करना, 'असूया' दोषों में गुण, गुणों में दोषारोपण करना, 'अर्थदूषण' अर्थात् अधर्मयुक्त बुरे कामों से धनादि का व्यय करना, वाग्दण्ड, कठोर वचन बोलना और पारुष्यं-बिना अपराध कड़ा वचन वा विशेष दण्ड देना ये आठ दुर्गुण क्रोध से उत्पन्न होते हैं।।६।। जिसे सब विद्वान् लोग कामज और क्रोधजों का मूल जानते हैं कि जिस से ये सब दुर्गुण मनुष्य को प्राप्त होते हैं उस लोभ को प्रयत्यन से छोड़े।।७।।

काम के व्यसनों में बड़े दुर्गण एक मद्यादि अर्थात् मदकारक द्रव्यों का सेवन, दूसरा पासों आदि से जुआ खेलना, तीसरा स्त्रियों का विशेष संग, चौथा मृगया खेलना ये चार महादुष्ट व्यसन हैं।।८।।

और क्रोधजों में बिना अपराध दण्ड देना, कठोर, वचन बोलना और धनादि का अन्याय में खर्च करना ये तीन क्रोध से उत्पन्न हुए बड़े दुःखदायक दोष हैं।।९।।

जो ये सात दुर्गुण दोनों कामज और क्रोधज दोषों में गिने हैं इन से पूर्व-पूर्व अर्थात् व्यर्थ व्यय से कठोर वचन से अन्याय से दण्ड देना, इससे मृगया खेलना, इस से स्त्रियों का अत्यन्त संग, इस से जुआ अर्थात् द्यूत करना और इस से भी मद्यादि सेवन करना बड़ा दुष्ट व्यसन है।।१०।।

इस में यह निश्चय है कि दुष्ट व्यन में फंसने में मर जाना अच्छा है क्योंकि जो दुष्टाचारी पुरूष है वह अधिक जियेगा तो अधिक-अधिक पाप करके नीच-नीच गति अर्थात् अधिक-अधिक दुःख को प्राप्त होता जायेगा और जो किसी व्यसन में नहीं फंसा वह मर भी जायेगा तो भी सुख को प्राप्त होता जायगा इसिलये विशेष राजा और सब मनुष्यों को चित है कि कभी मृगया और मद्यपानादि दुष्ट कामों में न फंसें और दुष्ट व्यसनों से पृथक् होकर धर्मयुक्त गुण, कर्म, स्वभावों में सदा वर्त्त के अच्छे-अच्छे काम किया करें।।११।।

क्रमशः

धरोहर...

आर्य समाज के अमर बलिदानी

महात्मा भक्तफूलसिंह जी महाराज

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
उ०प्र०, लखनऊ
संचालक–गुरूकुल पूठ, हापुड़
मो० ६८३७४०२१६२

लम्बा कद, इकहरा शरीर, चौड़ा कद, इकहरा शरीर, चौड़ा मस्तक, लम्बी दाढ़ी एवं जटायें अधोवस्त्र एवं उत्तरीय वस्त्र में सुशोभित, प्राचीन काल के ऋषि परम्परा के पोषक, वैदिक धर्म के उन्नायक, शुद्धि आन्दोलन के परिषक्त गुरूकुल प्रणाली के लिए समर्पित व्यक्तित्व, वैदिक जीवन धारा से आबाल वृद्ध को जीवन प्रदाता, दलिताद्धारक, दीन दुःखियों के सम्बल सदैव शूरवी दानवीर, कर्मवीर, धर्मवीर बनने के लिए लालायित स्वामी श्रद्धानन्द जी से पूर्ण रूपेण प्रभावित आशा से भावी पीढ़ी के निर्माणार्थ अहर्निश चिन्तित, सच्चे अर्थों में भक्त शब्द को सार्थ करने वाले, बिन्दु से विकास की चरम सीमा को पार करने वाले दृढ़ संकल्प के धनी, प्राणीमात्र की कल्याण कामना को सदैव संजीवनी बनकर जीवन प्रदाता के रूप में आर्य समाज को प्रभु प्रदत्त वरदान मिला था जो ऐसे घोर संकट काल में हनुमान की तरह अपनी ऊहा को परोपकारार्थ प्रदान करते रहे श्री भक्त फूलसिंह जी का नाम सुनते ही मन में उक्त चित्र उभर आता है आपके संस्मरण सुनाकर आर्य लोगों में भक्ति–शक्ति का भाव स्पष्ट देखने को मिल जाता है।

वर्ष १९६८ में गुरूकुल ततारपुर के वार्षिक सम्मेलन पर स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती (तत्कालीन भगवान देव जी आचार्य) ने प्रातः कालीन यज्ञ के पश्चात आपके जीवन की घटना सुनाकर यज्ञोपवीत प्रदान किये थे और तभी लोगों की बीड़ी–हुक्का, शराब छुड़वाने की प्रतिज्ञायें कराई थीं। तभी से उनके विषय में विशेष जानकारी प्राप्त करने की अभिलाषा जागृत हुई थी जो जैसा जाना उसे आपके समक्ष वर्णन करने की इच्छा से उपस्थित हूं आशा है पढ़कर स्वयं तथा अन्यों को भी प्रेरणा प्रदान करेंगे मुझे भक्त फूलसिंह जी में स्वामी श्रद्धानन्द जी की समानता दिखाई देती है बाल्यकाल से लेकर जीवन दर्शन एवं अमर बलिदानी मृत्यु तक स्वामी श्रद्धानन्द जी के दर्शन अनुभव होते हैं महात्मा आनन्द स्वामी जी ने शंकर और दयानन्द पुस्तक लिखकर महर्षि दयानन्द जी सरस्वती से आचार्य शंकर की तुलना की है इसी प्रकार कोई विद्वान लेखक इस दिशा में प्रयास करे भक्त फूल सिंह और स्वामी श्रद्धानन्द नामक पुस्तक लिखी जा सकती है मैं तो संक्षेप में भावपूर्ण वृत्त से ही आपको परिचित कराने का सूक्ष्म प्रयास कर रहा हूं।

आपका जन्म २४ फरवरी १८८५ को हरयाणा प्रान्त तत्कालीन पंजाब के अन्तर्गत वर्तमान सोनीपत जिले के माहरा ग्राम में चौ० बावरसिंह एवं माता तारावती के घर हुआ था। आप बाल्यकाल में तेजस्वी प्रतापी वर्चस्वी, गुणवान एवं बुद्धिमान थे पढ़ने में कुशाग्रबुद्धि थे तथा धैर्यशील, वीर तथा निर्भीक थे। ११ वर्ष की आयु के लगभग साथी बच्चों से आप कुसंग में पड़ गये और माता–पिता तथा गुरूजनों के लिए चिन्ता का कारण बने ग्राम से बाहर विद्यालय था अतः पूरा नियन्त्रण माता–पिता नहीं कर पाये पहले निकटस्थ ग्राम जूआँ में फिर खरखौदा में शिक्षा प्राप्त की मिडिलकक्षा तक पढ़ने के बाद पटवारी (लेखपाल) राजस्व विभग ी तैयारी करके उत्तीर्ण हो गए अध्ययन काल में भी आपकी निर्भीकता की कहानियां हैं सांप मारना–बड़े बच्चों की दादागिरी ठीक करना, अन्याय के विरूद्ध सदैव संघर्ष करना आपका स्वभाव बन गया था लेकिन पटवारी की परीक्षा उत्तीर्ण करके तो समझो जैसे आजकल पी. सी.एस. पास कर लिया हो क्योंकि जैसे डी.एम. जिलाधिकारी होता है वैसे ही पटवारी उस समय ग्रामस्तर पर जिलाधिकारी होता था ग्राम अधिकारी तो आज भी रहता है। २० वर्ष की आयु में रोहतक जिले के खण्डा ग्राम में श्रीमती धूपकौर के साथ विवाह सम्पन्न हुआ राजस्व विभाग में आपको नियुक्ति मिली सर्वप्रथम सीख पाथरी ग्राम जिला करनाल में आपने पटवारी पद सम्भाला काम करने की आपकी प्रवृत्ति से सभी प्रभावित हुए सभी ग्रामवासी आपको सम्मान करते थे। लेकिन आपके दुर्गुण की प्रवृत्ति के प्रति अच्छे भाव नहीं थे आपकी मित्र मण्डली भी इस बात पर चिन्तित रहने लगी कि इन्हें कैसे सुधारा जाये, यदि यह व्यक्ति शराब पीना छोड़ दे तो समाज के लिए अधिक लाभकारी हो सकते हैं चाह को मिल जाती रहा आर्य समाज का प्रचार प्रसार पंजाब में प्रभावी हो चुका था और आर्य समाज के सभी अधिकारी/सदस्य पवित्र जीवन एवं दृढ़ संकल्पी वैदिक सिद्धान्तों के लिए समर्पित रहते थे प्रत्येक बुराई के सुधार के लिए प्रयासरत रहते थे आर्य समाज का स्वर्णकाल था ऐसी मित्र मण्डली में आर्य समाज से प्रभावित सदस्य भी थे।

आर्य समाज पानीपत से जुड़े प्रीतिसिंह पटवारी मुख्य थे उन्हें ही श्रेय जाता है जो उन्हें सन्मार्ग पर प्रेरित करने के लिए आर्य समाज में प्रविष्ट किया उन्होंने एक दिन योजना बनाई कि फूलसिंह पटवारी को आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में ले जाकर यज्ञोपवीत संस्कार कराया जाये फिर यह विशिष्ट उपहार वरदान बन जायेगा। ऐसा सोचकर भी प्रीतिसिंह पटवारी जी ने कहा कि चलो आर्य समाज के सत्संग में चलते हैं प्रारम्भ में तो मना किया लेकिन मित्र का उपदेश मीठा प्रसाद होता है वे आर्य समाज में जाकर यज्ञशाला में जाकर बैठ गये यज्ञ प्रारम्भ हुआ और आचमन के पश्चात् पीछे से उनके गले में यज्ञोपवीत पहना दिया यज्ञोपरान्त स्वामी ब्रह्मनन्द जी सरस्वती द्वारा उपदेश में नियम बताये गये उन नियमों के पालन में ही कायाकल्प हो गया स्वाध्याय से और बल मिला सत्यार्थ प्रकाश एवं भजन संग्रह सिद्धान्त आदि–आदि पुस्तकें पढ़ने के बाद क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और जीवन के समस्त दोष नष्ट करके स्वर्णरूपी जीवन को कुन्दन बना दिया दिनचर्या, भोजन, व्यवहार में परिवर्तन हुआ। १. शुद्ध आहार, २. शुद्ध आचार, ३. शुद्ध व्यवहार ईश्वर भक्ति और सात्विकता से आपको भगत जी कहने लगे और इसी आधार पर आपका नाम भक्तफूल सिंह पटवारी प्रसिद्ध हो गया जो जीवन के अन्तिम क्षणों तक सार्थक करते हुए तपस्या की भट्टी में तपाया, विषय परिस्थितियां आने पर भी हिम्मत नहीं हारी जीवन की प्रेरक घटनायें संक्षेप से देने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूं। आपने प्रातः, सायं सन्ध्या–ध्यान का नियम अनिवार्य किया और आत्मचिन्तन द्वारा निश्चय किया और आत्मचिन्तन द्वारा निश्चय किया कि जब तक आध्यात्मिक ऊर्जा नहीं बढ़ेगी तक तक साधना सफल नहीं होगी होगी उसके लिए आन्यन्तर शुद्धि अनिवार्य है। इस संकल्प को आपने जीवन का अधिकरण बनाकर खान–पान की पवित्रता चरित्र की पवित्रता, साधना–स्वाध्याय से व्यवहार की कुशलता और अपने कर्त्तव्य पथ पर चलते हुए ग्राम में आबाल वृद्ध की उन्नति हेतु अभियान प्रारम्भ किये आपका आत्मबल इतना बढ़ गया था कि आप संकल्पित कार्य को पूरा कराने के लिए ग्राम के सभी अधिकारियों को एवं प्रबुद्ध जनमानस को अपने साथ जोड़कर चलने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेते थे।

चरित्र निर्माण के लिए आपके मन में भाव जागृत हुए कि मुझे बच्चों का एक गुरूकुल बनाना चाहिये उसके लिए स्थान चयनित कर लिया और भूमि भी देख ली परामर्श किया तो वह भूमि कई जमींदारों की शामिल खाता थी कुछ सहमत हो कुछ नहीं हुए बस धुन के धनी आत्मबली ने अनशन प्रारम्भ कर दिया कि जब तक भूमि प्राप्त नहीं होगी अन्न–जल ग्रहण नहीं करूंगा कई दिनों के पश्चात् आपके प्रति लोगों की आत्मीयता बढ़ी और आपके निर्देशनुसार भूमि प्रदान कर दी। यह सच्चे आर्यमनीषी की विजय थी समाज सेवा का कार्य शिक्षा से जुड़ा गया और सेवा का स्तर भी बढ़ गया।

एक बार गुरूकुल कांगड़ी के उत्सव पर मित्रों सहित गए स्वामी श्रद्धानन्द जी के मधुर उपदेश उनके जीवन में नींव के पत्थर बन गए वहीं से आप आर्य समाज के दीवाने बन गए दिन रात पटवारी के कार्य के साथ–साथ वेद प्रचार एवं समाज सुधार कार्य भी चलता रहता था। सन् १९०९ में सारे भारत में प्लेग की बीमारी फैल गई लोग घर छोड़कर ग्राम छोड़कर जाने लगे हा–हाकार मच गया सरकारी अधिकारी भी छुट्टी लेकर अपने परिवार के बहाने घर चले गए ऐसे विकट समय में आर्य समाज के उपदेशकों तथा अधिकारी कार्यकर्त्ता ने सेवा का संकल्प लिया और मरते लोगों के प्राण बचाये ठीक होने पर लोगों ने आर्य समाज का सदैव उपकार माना भक्त फूल सिंह जी ने भी अपने क्षेत्र में लोगों का आशीर्वाद प्राप्त कर आत्मीयता से वेद प्राचार कार्य किया।

वेद प्रचार में उपदेशों का इतना लाभ हुआ कि आपने रिश्वत लेना छोड़ दिया जिनसे ली थी उसे वापस कर दिया थानेदार ने रिश्वत ली थी उससे वापस दिलवाई आत्मशोधन के लिए इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकात है ऐसे पवित्र हृदय के व्यक्तित्व बन बए थे भक्त फूलसिंह जी समाज सेवा कार्य में अधिक समय देने से नौकरी में पूरा समय नहीं दे पाते थे अतः त्यागपत्र दे दिया

शेष पृष्ठ 8 पर

श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्

– अर्जुन देव स्नातक

लेखक के अभी लेख का शीर्षक लिखा ही था कि– आर्य समाज के स्वाध्यायशील दो प्रतिष्ठित सदस्य आ गये। अभिवन्दन के शिष्टाचार के बाद बैठते हुए बोले–आज फिर एक उलझन भरा उपनिषद का वाक्य समझा में में नहीं आ रहा है अतः आपके साथ उस विषय में परामर्श करने आये हैं–कहते है न वादे वादे जायते तत्वबोधा'' अर्थात् परस्पर मिलकर वाद–विवाद या चिन्तन करने से निश्चित सिद्धान्त का बोध अनायास हो जाता है।

इतने में एक सदस्य ने लेख के शीर्षक को देखकर कहा आपने जो शीर्षक लिखा है– इसी विषय को समझने के लिए आये हैं कि 'श्रद्धया देयम्' अर्थात् दान या सहयोग श्रद्धा से करते हैं पर अश्रद्धा से कैसे कर सकते हैं?

इतने में दूसरे सदस्य ने लेखक के शीर्षक को देखकर कहा–आपने जो शीर्षक लिखा है–इसी विषय को समझने के लिए आये हैं कि 'श्रद्धया देयम' अर्थात् दान या सहयोग श्रद्धा से करते हैं पर अश्रद्धा से कैसे कर सकते हैं? इतने में दूसरे सदस्य बोले– ''यहां छापेखाने की अशुद्धि है– यहां –''अश्रद्धयादेयम'' अर्थात् आश्रद्धा से नहीं देना चाहिए। 'अश्रद्धया अदेयम्' दीर्घ सन्धि के नियम से 'अश्रद्धयादेयम्' होना चाहिए।

क्या सही है, क्या गलत है– इसे समझने के लिए पहले हम एतद् विषयक ''तैतिरीय उपनिषत्'' के वचनों को देखते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास के अनुसार–..... 'श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम। (तैतरीय उ.प्रपा६/अनु. ११/कं. ३१)

यहां तो स्पष्ट कप में 'अश्रद्धया देयम्' यही छपना चाहिए। व्यावहारिक जगत् में श्रद्धा सेदेने वाली बात ठीक प्रतीत होती है। अश्रद्धा से देने वाली बाल ठीक नहीं लगती। आपकी बात वैसे तो सत्य लगती है किन्तु प्रथम हम स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश क्या अर्थ लिखा है, इसको देखते हैं। उसका किया हुआ अर्थ हम लोगों की दृष्टि में प्रामाणिक हैं। सत्यार्थ प्रकाश के अनुसार ''श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना, और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिए''। (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लेख)।

इस अथ को पढ़कर हम दोनों की उलझन और बढ़ गयी। जहां तक श्रद्धा से, शोभा से, प्रतिज्ञा से देना चाहिए–यह ठीक है– किन्तु लज्जा से, डर से देना चाहिए– अब तक हम केवल अश्रद्धा से देना चाहिए– की उलझन में थे। अब लज्जा और डर 'इन दोनों ने और अधिक उलझन में डाल दिया। आपकी बात सही है किन्तु क्या इसे नहीं माने? ऐसा नहीं– हम शास्त्र वचन एवं स्वामी दयानन्द जी सम्मत बात को नहीं माने–यह तो सम्भव ही नहीं है। तब तो हमें चिन्तन करना चाहिए। महाभाष्यकार का वचन है–

''व्याख्यान तो विशेष प्रति पत्तिर्नहि सन्देहादलक्षणम्''

अर्थात् सन्देह होने पर किसी बात को अन्यथा न समझकर व्याख्यान से विशेष बात का निर्णय कर लेना चाहिए।

हम तीनों ही इस बात से भी सहमत हैं। चहिलए विचार करते हैं– इस उलझन को सुलझाने का सफल प्रयास करते हैं। एक बात ध्यान रखें कि यह बात लोक व्यवहार से ही सुलझ सकती है। यहां हम देना अर्थात् सहयोग या सहायता करना यह अर्थस्वीकार करें।

आप ठीक ही कह रहें हैं–क्योंकि जो हम धनादि देते हैं, वह सहयोग या सहायता ही तो करते हैं। पहले हम 'अश्रद्धया देयम्' पर विचार करते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में दान के विषय में खिलते समय पहले कुपात्र और सुपात्र के विषय में लिखा है। वहां सुपात्र के विषय में लिखते हुए अन्त में लिखते हैं–

'' परन्तु दुर्भिक्षादि आपत्काल में अन्न, जल, वस्त्र, औषधि, पथ्य स्थान के अधिकारी सब प्राणिमात्र हो सकते हैं, (स.प्र.एकादशस.)। स्वामी जी के उकत वचनों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि उक्त स्थिति में–केवल मात्र श्रद्धेय को नहीं अपितु अश्रद्धेय की भी सहायता करनी चाहिए, अर्थात् अश्रद्धया देयम्।

मनुस्मति अध्याय ७ के ८४ (६४) वें श्लोक में वर्णित है– और (युद्ध में) जो भी घायल हुए हों उनको औषधादि विधि पूर्वक करें, न उनको (शत्रु पक्ष के लोगों को) चिढ़ावे (तुम युद्ध में हारे हो आदि वाक्यों से) न दुःख देवे''। अर्थात् सहयोग करे। अश्रद्धा होने पर भी– अश्रद्धया देयम्–सहयोग करना है।

वर्तमान में ''संयुक्त राष्ट्र संघ'' की ओर से भी एक ऐसी सेना संगठित है– जो युद्ध के बाद घायल पड़े हुए सभी लोगों की भेदभाव भुलाकर यथोचित सहायता करती है।

अभी मकर संक्रान्ति पर्व पर लोगों को बिना किसी भेद–भाव के आवश्यक कम्बल आदि बांटे गये–उसमें भी श्रद्धेय अश्रद्धेय का भेद नहीं रखा जाता है–सहायता की जाती है।

एक सदस्य बोले–सत्य तो है तब कहीं अकाल भूकम्प महामारी, बाद आदि तथा रेल आदि की दुर्घटना आदि से पीड़ितों की सहायता में श्रद्धा– अश्रद्धा का विचार न करने समान रूप से यथोचित सहायता की जाती है। संभवतः हृदय की विशालता बनी रहे, यह संकुचित न हो, अतः उपनिषदत्कार ने 'अश्रद्धया देयम्' कहा है।

एक बात और बात यह भी है कि हम जब यज्ञ करते हैं, तब उसकी सुगन्ध तथा उस का लाभ समान रूप से सबके पास अर्थात् तब हमारे मन में श्रद्धेय अश्रद्धेय का भाव न उठकर 'सर्वेभवन्तु सुखिनः' वो विशाल उद्‌गार निकलते हैं। इस प्रकार हम हृदय की विशलता कम हो इस भावना से ही 'अश्रद्धया देयम्' वाली बात कही है। वेद का भी आदेश है–पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः (यजु० २६.५१) मनुष्य–मनुष्य की रक्षा सब प्रकार से करे।

तो आगे ह्रियादेयम्' लज्जा से देना चाहिए तथा ''भिया देयम'' डर से देना चाहिए पर विचार करें। इस पर विचार तो कल्पना से तथा व्यावहारिक दृष्टि से विचार करते है। देखिए–कभी–कभी ऐसा भी होता है कि हम किसी सन्त के सहसंग में बैठे हो। सत्संग के अन्त में किसी कार्य के लिए दान मांगा जा रहा था। हमारी इच्छा तो यहां कुछ देने की नहीं थी, किन्तु इतने में हमने देखा हमारा एक परिचित दान देते समय हमारी ओर ही देख रहा था, मानो वह कह रहा था कि तुमसे कम धनवान हूं, फिर भी मैं दे रहा हूँ आप नहीं, हमें लज्जा का अनुभव हो रहा था। अतः हमने भी दान देकर 'ह्रिया देयम्' वाली बात सार्थक की।

इस विषय में और विचार करते हैं। कल्पना करें कि हमारे बेटे का विवाह हुआ। घर में बहु आई थी कि दो दिन बाद ऐसे अवसर पर मांगने वाले शिखण्डी (हिजड़े) आयें, आते ही ढ़ोलक बजाकर नाच–गाना करने लगें। उन्हें कुछ न दें या बहुत कम दें तो बिना संकोच बढ़ा–चढ़ा कर हमारी निन्दा करेंगे। हमारी इस प्रकार निन्दा न हो, हमें लोगों लज्जित न होना पड़े इस आशा से हमें 'ह्रियादेयम्' वाली बात अपनानी ही पड़ती है।

ऐसे अन्य कई अवसर आते हैं–जहां लोग क्या कहेंगे? ऐसा सोचकर शर्म के मारे भी हमें देना ही पड़ता है। चलिए थोड़े बहुत अंश में आपने जो कहा वह सही है। हम सम।ज में रहते हैं–कोई हमारे ऊपर उंगली न उठाये। इस भावना को ध्यान में रखकर 'ह्रिया देयम' को सार्थक करते हैं। अब आगे 'भिया देयम्' डर से देना चाहिए पर भी विचार कर लें। कल्पना करें कि एक बार एक इन्कम टैक्स ऑफिसर हमारे पास आकर बोले– हमारे गांव में एक विद्यालय बनाने का निश्चय किया गया है। तीन कमरों के लिए तो धन प्राप्त हो गया है– एक कमरा आप बनवा दीजिए। अधिक नहीं बीस हजार रूपये आप दें दे तो चौथा कमरा भी बन जायेगा।

हमने सोचा इस ऑफिसर की हम नहीं देंगे तो किसी भी समय हमारे आय–व्यय में कुछ कमी निकालकर हमें फंसा ही देगा–तब 'भिया देयम्' की सार्थकता सम्पन्न हुई। हमारे ही मोहल्ले का एक अत्यन्त दुष्ट प्रकृति का व्यक्ति अपने कुछ साथियों के साथ दान मांगने आया। पूछने पर विदित हुआ। अमुक मन्दिर पर इस शनिवार को भण्डरा करना है। आपकी ओर से कम से कम पांच हजार रूपये दान में मिलेंगे इस आशय से आये हैं।

हमने देखा उसके बगल की जेब में कट्टा रखे हुए थे। साथ आये साथियों के हाथों में लाठियां भी थी। हमें अच्छी तरह मालूम इसने जो धन मांगा, नहीं दिया तो यह तोड़–फोड़ कर देता है। अतः हमने ''भिया देयम्'' को सार्थक किया।

एक दिन हमारे वार्ड के एम.एल.ए. साहब अपनी पार्टी के कुछ सदस्यों को लेकर आये। विनम्रता के साथ आप हमारी पार्टी के सदस्य तो नहीं है फिर भी हम अपनी पार्टी के लिए आपसे चन्दा मांगने आये हैं। एक हजार रूपये चन्दे में दीजिए–आप समर्थ हैं, इसलिए इतने धन की आशा से हम आपके पास आये हैं। इस समय तो हमारी पार्टी का वर्चस्व है, तो भी हम विनम्रता से आपसे मांग रहें हैं। आशा है आप हमें निराश नहीं करेंगे। साथ में आये एक साथी ने दूसरे साथी से धीमे से कहा–नहीं देंगे तो परिणाम भुगतगें।

हमने अपनी बात सुनकर ''भियादेयम्' वाली बात को सार्थक किया। इसी प्रकार राज भय से दुष्टों के भय से तथा किसी उच्च अधिकारी के भय से हमें 'दान' न चाहते हुए भी भय से देना ही पड़ता है।

निष्कर्ष यह है कि सत्य शास्त्रों की बातों को हमें यह असत्य है, व्यर्थ लिखा है, ऐसा कैसे हो सकता है आदि उपेक्षा भरी या निराश जनक बातें नहीं करनी चाहिए। अपितु महाभाष्यकार के इस वचन के आधार पर–

''व्याख्यान तो विशेष प्रतिपतिर्नहि सन्देहादलक्षणम्''

अर्थात् सन्देह मात्र से किसी बात को अन्यथा न समझकर व्याख्यान विशेष से विशेष बात का निर्णय कर लेना चाहिए। इस आधार पर चिन्तन करने से व्यावहारिक सन्दर्भों से सत्य बातों को प्रत्यक्ष कर सकेंगे। ठीक ही लिखा है– ''सत्यमेव जयते''

मो० ०८६०६३४७३२६

चरैवेति-चरैवेति

– श्री रामवीर आचार्य, अलीगढ़

यह उपर्युक्त वाक्य श्वेताश्वतर उपनिषद् का है जो सर्वथा सत्य है। वास्तव में कर्तव्य मार्ग पर चलते रहना धर्म है। उन्नति का मूल मन्त्र है और सफलता का प्रेरणा स्त्रोत है। कर्तव्य पालन से मनुष्य को संसार में यश की प्राप्ति होती है व सभी कर्मों में सफलता भी मिलती है। इससे बढ़कर संसार में कोई धर्म नहीं है। जिन्होंने इस कर्तव्य पथ का अनुसरण किया है उन्होंने अपूर्व सफलतायें पाई हैं, यश और सम्पत्ति अर्जित की है। गीता में योगिराज कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलतुर्भूः, मा ते संगो ऽस्त्वकर्मणि।।

अर्थात् मनुष्य का कर्म करने का अधिकार है फल भोगने का नहीं। कर्म फल का कारण मत बनो और दुष्कर्म में तुम्हारी आसक्ति न हो। आपने आगे यह भी कहा है कि मनुष्य जो भी कार्य करे वह फल की इच्छा छोड़कर करे, तब तो उसे आनन्द मिलता है अन्यथा नहीं। जैसे मूर्ख मनुष्य फल की इच्छा से काम करते हैं, उसी प्रकार मनुष्य को फल की इच्छा छोड़कर काम करना चाहिए।

भारतीय संस्कृति कर्त्तव्य की प्रेरक रही है। इसमें आलसी जीवन दुःख और दीनता का प्रदायक माना गया है। उपनिषदें भी यही शिक्षा देती हैं। श्वेताश्वतर उपनिषद् में इस कर्त्तव्य शीलता का उपदेश देते हुए कहा है–

पुष्पिण्यौ चरतो जंघे, भूष्णिरात्मा फलग्रहिः।
शेरे अस्य पाप्मानः, श्रमेण प्रदथे हताः।
चरैवेति, चरैवेति।

अर्थात् जो मनुष्य अपने काम में लगे रहते हैं, आलस्य में नहीं रहते उन की जंघाए फूल जाती हैं, आत्मा बलवान बन जाती है और उनके सभी पाप दूर हो जाते हैं। इसीलिए कर्त्तव्य पथ पर खड़े रहो। यहीं तक नहीं करते हैं, सदा परिश्रम करते रहते हैं उनका जीवन दाहविशुद्ध सुवर्ण की भांति चमकने लगता है। उनका यश सर्वत्र फैलता है। उनको सतयुग और कलियुग के बन्धन अपनी सीमा में नहीं बांध पाते। उनके लिए सभी युग समाधन हैं। उपनिषद् में लिखा–

कलिः शयानो भवित, सैजिहानस्तु द्वापरः।
अत्तिष्ठन् त्रेता भवित, कृतं संपद्यते चरन्।।

अर्थात् सोने का नाम ही कलियुग है, सोकर उठ बैठने का नाम ही द्वापर है, उठ खड़े होने का नाम त्रेता है तथा कार्य करने में जुट जाने का नाम सतयुग हैं। इसीलिए उपनिषद् में कर्तव्य पथ में अग्रसर रहने की प्रेरणा दी है, इससे मनुष्य शतायु प्राप्त करता है।

संसार में जितने भी महापुरूष हुए हैं, उन्होंने अपने कर्तव्य मार्ग का ही अनुसरण किया है। मर्यादा पुरूषोत्म राम और योगिराज कृष्ण ने आजीवन कर्तव्य का पालन किया। जीवन में बड़ी कठिनाइयां सही पर अपना कर्तव्य मार्ग नहीं छोड़ा। इसी प्रकार राजा भगीरथ ने वर्षों तक गंगावतरण के लिए कठोर तपस्या की। म० गौतमबुद्ध, महावीर स्वामी तथा महर्षि दयानन्द आदि अपने कर्तव्य पालन में अडिग रहे। जीवन भर धर्म प्रचार करते रहें। जीवन भर धर्म प्रचार करते रहें। पथभ्रष्ट मानव को कुमार्ग से हटाया, सन्मार्ग पर चलने, की प्रेरणा दी। इसी प्रकार स्वतन्त्रता संग्राम के अमर सैनानी विश्वबन्धु म० गांधी भी जीवन पर्यन्त जनता को कर्तव्य की रहा दिखाते रहे उनका तो जीवन ही कर्त्तव्य मय था।

यह कर्त्तव्य मार्ग बड़ा विशाल है। इसकी कोई सीमा नहीं। घर हो या बाहर, पाठशाला हो या कीड़ाभूमि, राजमहल हो या दीन की झोंपड़ी, मन्दिर हो या धर्मशाला सभी स्थलों पर इसका अधिकार क्षेत्र है। इस पर चलना महापुरूषों का कार्य है। इसी पर चलके वे अपना नाम अमर करते हैं। जो लोग अपने कर्तव्य का ध्यान नहीं देते ऐसे आलसी व कर्त्तव्यहीन व्यक्ति सर्वत्र अपमानित होते हैं। और अपयश के भागी बनते हैं। वास्तव में कर्त्तव्य पालन ही जीवन है और कर्त्तव्य विमुखता ही मृत्यु है। इसलिए यह उपनिषद्वाक्य सच ही है–

चरैवेति, चरैवेति।

वैदिक काल की नारियाँ

गार्गी–भारतीय प्राचीन इतिहास और दर्शनों में गागी का नाम बहुत प्रसिद्ध है। पूर्वकाल में ही ये विदुषी महिला बहुत ऊँचे सोपान पर चढ़ गयी थी। यद्यपि इनका नाम कोई और रहा हो, परन्तु गर्ग गोत्र में उत्पन्न होने से इन्हें गार्गी नाम से ही जाना जाता है। गार्गी बड़ी पढ़ी–लिखी महिला थी, इसीलिए तो ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में इनका नाम विश्वभर में विख्यात हो गया। इनकी व्यक्तव्य और तर्क शैली इतनी प्रभावशाली थी कि बड़े–बड़े विद्वान् भी शास्त्रार्थों में इनके सामने नहीं ठहरते थे।

एक बार मिथलापुरी के राजा जनक ने अपने राज्य में एक बहुत बड़ा विद्वानों का शास्त्रार्थ कराया। इस शास्त्रार्थ में विश्वभर के बड़े–बड़े वेद के विद्वान् बुलाये गये थे। इस सन्त–समागम की सूचना को सुनकर गार्गी देवी भी वहां पहुंच गयी। राजा जनक ने यह घोषणा कर दी थी कि जो इस शास्त्रार्थ में सर्वोपरि विजेता होगा उसके लिए सोने से सींग जड़ी हुई दस हजार (१०,०००) गायें प्रदान की जायेंगी।

इसकेक बाद शास्त्रार्थ समर प्रारम्भ हुआ और महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने धीरे–धीरे उस सभा के समस्त विद्वानों को परास्त कर दिया। सब विद्वानों को शास्त्रार्थ में हराकर जब याज्ञवल्क्य जी उन गायों को ले जाने लगे तो गार्गी ने भी उनसे शास्त्रार्थ करने का निवदेन किया। यह सुनकर याज्ञवल्क्यजी ने गार्गी से शास्त्रार्थ करना स्वीकार कर लिया। इसके बाद राजा जनक की आज्ञा को पाकर गार्गीजी ने महर्षि याज्ञवल्क्य से प्रश्न पूछने प्रारम्भ कर दिये और याज्ञवल्क्यजी भी उनके सटीक उत्तर देने लगे। यद्यपि गार्गी ने ईश्वर सम्बन्धी जितने प्रश्न किये थे उनके उत्तर उन्हें मिल गये, परन्तु अन्तिम प्रश्नों पर याज्ञवल्क्यजी भी चुप हो गये।

इसके बाद विद्वानों की सभा ने गार्गी को ही इस शास्त्रार्थ का विजेता घोषित कर दिया और उन्हें ही उन गायों को ले जाने का अधिकार दे दिया। उस समय इतने बड़े वयोवृद्ध वेद–मनीषी का सभा में अपमान करना गार्गी को अच्छा न लगा और उन्होंने सभा में यह घोषणा कर दी कि –इस सभा में याज्ञवल्क्य जी से बड़ा कोई विद्वान् नहीं है अर्थात इस शास्त्रार्थ में इन्हीं की विजय हुई है।

गार्गी के इस प्रकार के वचनों को सुनकर सभा में सन्नाटा छा गया और सब लोग उनकी ओर को ताकने लगे। गार्गी की उदारता और त्याग को देखकर याज्ञवल्क्य भी उनकी प्रशंसा करने लगे। गार्गी जी के कहने से वे दस हजार स्वर्ण भूषित गायें भी यावल्क्य को ही प्रदान कर दी गयीं। इसके बाद गार्गी की विद्वत्ता की प्रशंसा भी सब लोग करने लगे। उनकी विनम्रता और उज्ज्वल चरित्र को लोग कभी नहीं भूल सकते हैं। वास्तव में ऐसी धर्म परायणा स्त्रियों ने ही स्त्री समाज को गौरव प्रदान किया है। गार्गी की चर्चा वृहदारण्यक उपनिषद में विस्तार से की गयी है।

भ्रातृ-भाव

– चंदन मित्र

सन् १८८० की घटना है। उस वर्ष कलकत्ता नगर में महामारी का भयंकर प्रकोप हुआ था। ब्रिटिश सरकार को प्रजा कोई चिन्ता नहीं थी, सहस्रों लोग महामारी के शिकार हो रहे थे। न औषधोपचार का ठिकाना था और न अन्त्यक्रिया का ही। मनुष्य निरा निष्करूण बन गया था।

ऐसे में एक दिन ईश्वर चन्द्र विद्यासागर प्रभात बेला में महाविद्यालय जाने के लिए घर से निकले। मार्ग में एक वृक्ष के पास उन्हें एक व्यक्ति पड़ा हुआ दिखाई दिया। वह भंगी था। क्योंकि उसके समीप ही उसकी झाडू आदि वस्तुएं पड़ी हुई थीं। वह कष्ट से छटपटा रहा था। उस मार्ग से अन्य लोग भी आ–जा रहे थे, देखकर भी अनेदेखा कर रहे थे।

विद्यासागर ने जब यह देखा तो वे उसके पास गये। उन्होंने उसे जांचा–परखा तो पाया कि उसे तीव्र ज्वर है। अर्द्ध–मूर्च्छित अवस्था में था। न तो कुछ मुख से बोल पा रहा था और न कुछ सुन ही पा रहा था। आँखें भी मुंदी हुई थीं।

ईश्वर की कृपा से विद्यासागर का शरीर कुछ बलिष्ठ था। स्पृश्यापस्पृश्य का विचार उन्हें स्पर्श तक नहीं कर पाया था। उसके वस्त्र बादल कर उसे अपने वस्त्र पहनाये और स्वच्छ बिस्तर पर उसको लिटा दिया। फिर उन्होंने अपने पारिवारिक डाक्टर को बुलाने के लिए नौकर को कहा। डाक्टर ने आकर अपना काम किया और चला गया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को टोकने का साहस किसी को नहीं होता था। घर का कोई अन्य व्यक्ति भी उस भंगी की सेवा–सुश्रूषा में उनकी कोई सहायता नहीं करता था, वे स्वयं ही उसकी सेवा कर रहे थे।

मनुष्य स्वभाव से विचित्र है। आस–पड़ोस के लोगों को भय सताने लगा था। क्यों कि उनके पड़ोस में महामारी का रोगी बसा दिया गया था। उन्होंने कानाफूसी आरम्भ की, वे उसके विषय में पूछने लगे कि कौन है, कहां से आया हैं, क्या काम करता है आदि?

विद्यासागर कहते, यह मेरा भाई है, नगर के बाहरी भाग में रहता है। मैं और ये हम दोनों एक ही काम करते हैं, यह बाहरी सफाई काम करता है, मैं भीतरी सफाई का काम करता हूँ।

पड़ोसियों और जात–बिरादरी के लोगों ने विद्यासागर को बहुत समझाया और ने समझने पर उन्हें डराया–धमकाया भी किन्तु ईश्वर चन्द्र उसको बहार निकालने के विषय में टस से मस नहीं हुए। पन्द्रह दिन उसको स्वस्थ होने में लगे, तब वह अपने घर गया। जाते समय ईश्वरचन्द्र ने कहा, "अब कोई अड़चन आये तो मुझे निस्संकोच बताना। मैं तुम्हारा भाई हूं।"

ईश्वरचन्द्र ने यह भाईचारा उसके साथ आजन्म निभया।

मन

– श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

मन जड़ होता है। आत्मा के सम्पर्क से इसमें चेतना आती है। जिस प्रकार जड़ चद्रमा में अपना प्रकाश नहीं होता वह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है इसी प्रकार जड़ मन आत्मा के प्रकाश से प्रकाशित होता है। मन पर आत्मा का अच्छा प्रकाश पड़ने के लिए आत्मा अच्छा और पवित्र होगा तो मन पर अच्छा प्रकाश पड़ेगा, यदि आत्मा बुरा और गंदा होगा तो मन पर बुरा प्रभाव पड़ेगा, यदि आत्मा बुरा और गंदा होगा तो मन पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। आत्मा के विशाल और संकुचित होने के अनुपात में हो मन विशाल और संकुचित होता है।

मन ऊसर भूमि समान बंजर होता है। उत्तम शिक्षण और उपयोगी बनता है। भूमि को चिरकाल तक बंजार छोड़ देने से उसमें घास फूस कांटे और झाड़ उग आते हैं जिनसे न तो भूमि की शोभा होती है और न वह उपयोगी बनती है। इसी भांति मन के संस्कृत और विकसित न होने से वह अज्ञान, अन्ध–विश्वास, दुर्भावना और ईर्ष्या आदि विकारों से भरकर अशोभन बन जाता है। उत्तम ग्रन्थों के स्वाध्याय सत्पुरूषों के संग, अनुभव चिन्तन, मनन और सत्याचरण से मन विकसित और शोभा युक्त होता है। सत्याचरण के द्वारा मनुष्य के मन के धब्बे स्पष्ट होकर उसकी स्वच्छाता उसी प्रकार जलाशय की तली में देख पड़ने वाली कीचड़ से उसके जल की शुद्धता प्रमाणित होती है। ज्ञान से बुद्धि, तप से आत्मा, सत्य से मन औ जल से शरीर की शुद्धि हो जाने और मन से आत्मा के वशीभूत हो जाने पर इसमें असाधारण बल प्रफुल्लता और निर्भयता का संचार हो जाता है। इस शक्ति वा बल के कारण मनुष्य घोर आपत्तियों, प्रलोभनों और विकारों की आंधी में अडिग रहता और विकट परिस्थितियों में भी अपनी बुद्धि का स्वतंत्र प्रयोग करता है। मन की यह अवस्था उच्च होती हैं खतरों में अविचलित, असाक्तियों में निर्लेप, आपत्तियों में अडिग, अशान्ति में धीर, भय और प्रलोभनों में प्रसन्न और शान्त रहने वाले व्यक्ति देव स्वरूप होते हैं जिनके देवत्य से नश्वर देह प्रभावित और प्रकाशित रहती है।

वास्तविक मुख और शान्ति मन की एकाग्रता में निहित होती है। कल्पना करो आपके सामने नाना प्रकार के व्यंजनों से परिपूर्ण थाल रखा हुआ है। आप खाना ही चाहते हैं। उसी क्षण आपके किसी बन्धु या प्रियजन की बीमारी या मृत्यु का समाचार आ जाता है। उस समाचार को सुनकर आप एक दम खाना छोड़कर उठ जाते हैं। क्यों? इसलिए कि उस समाचार से आप के मन की एकाग्रता नष्ट हो गई।

बन गमन की आज्ञा प्राप्त होने पर मन की एकाग्रता का जैसा उदाहरण महात्मा राम के जीवन में मिलता है वैसा अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। यदि उस समय राम मन की शान्ति का उत्कृष्ट परिचय न देते तो रामायण की कथा का शायद और ही रूप होता।

आज संसार में सर्वत्र युद्ध की चर्चा और भय उपस्थित है। लोग शांति की रट लगा रहे हैं। विश्व के मान राजनैतिक नेता युद्ध क्षेत्र में शान्ति का निर्णय करना चाहते हैं। शीत युद्ध चल रहा है शीत युद्ध क्या है? यह है मनों के भीतर होने वाले युद्धों का स्थूल स्वरूप। अतः युद्ध और उसकी विभीषिका के रूकने का एकमात्र उपाय है मन के भीतर युद्ध और उसकी विभषिका के रूकने का एकमात्र उपाय है मन के भीतर के युद्ध का रूकना। अर्थात् मनोविकारों के भयंकर खेल का अन्त होना। आनन्द यह है कि वह युद्ध संसार के सभ्यतम व्यक्तियों के मनों में हो रहा है जिनके हाथों में संसार का भाग्य सूत्र है और जो अपनी विशिष्ट जीवन–पद्धतियों की रक्षा के जोश में भौतिक आभा और सुखों से परिपूर्ण संस्कृति को तलवार के बल पर कायम रखना चाहते हैं। वे इस सत्य को भूल जाते हैं कि भौतिकता का उत्कर्ष नश्वर होता है। समय बड़े–बड़े विशाल प्रसादों, मन्दिरों, बड़ी–बड़ी चित्रकारियों, पच्चीकारियों और प्राकृतिक चमत्कारों को बात की बात में धूम मे मिला देना है। वह यह भी भूल जाते हैं कि बड़े–बड़े बलवान् दिमागों के निर्माण में ही संस्कृति की शोभा और स्थिरता कामय रहती है। मन को उत्तम संस्कारों से परिपूर्ण करना उन शिलाओं पर खुदाई करने के समान है जिन्हें समय नहीं मिटा सकता। ऐसे ही उत्तम और अमिट संस्कारों से परिपूर्ण मनों से भावी सन्तान प्रकाश और प्रेरणा ग्रहण करती और अपने मनों को उत्तम बनाती है आज को मुख्यतम समस्या व्यक्तित्व के निर्माण और मनः शुद्धि की है। जिन संस्कृतियों ने सांसारिक वैभव और सुख के मुकाबले में त्याग भाव और चरित्र की प्रधानता दी वे ही आज जीवित है। यदि मनुष्य का ज्ञान विज्ञान, पंडित्य, कला कौशल और शोभा–प्रदृति मन को दास बनाने वाली हों और उनसे मनुष्य की प्रसन्नता नष्ट होती हो तो उनका क्या लाभ? धर्म के सांचे में ढलने पर ही मन में दृढ़ता और लचकीलापन आता है। इस सत्य से विमुख हो जाने से ही आज की भौतिक संस्कृति को विनाश का भय उपस्थित हो गया है और ऐसी संस्कृति यदि शीघ्र या देर में नष्ट हो जाय तो यह आश्चर्य की बात न होगी।

मन का खाली रहना बुरा है। खाली मन पर विकारों और दुर्भावनाओं का सहज ही आक्रमण हो जाता है। अतः मन को बुरे विचारों से अप्रभावित रखने का सरल उपाय यह है मनुष्य निठल्ला न बैठे और किसी उपयोगी कार्य में मन लगा रखे परन्तु इतना अधिक भी न लगे जिससे शरीर क्षीण हो जाय। तेज और क्रियाशील मस्तिष्क वालों को तो इस सम्बन्ध में विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि प्रायः ऐसे व्यक्ति शरीर का बहुत कम ध्यान रखते हैं। मन को आराम देने और उसमें ताजगी लाने के लिए उसका किसी निर्दोष मनोरंजन वा हल्के उपयोगी काम में लगना परमावश्यक होता है।

कहा जाता है मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माता होता है। मनुष्य अपने मन के कारण ही धनी–निर्धन, मूर्ख–पंडित, सुखी, दुःखी बनता है। इसी से स्वर्ग और नरक की सृष्टि होती और स्वर्ग–नरक एवं नरक स्वर्ग बनता है।

उच्च मन के विकास और प्रसासर के लिए एकान्त प्रियता भी आवश्यक होती है। अत्यधिक मानवी सम्पर्क से बहुत से अच्दे तत्व नष्ट हो जाते हैं और शोर तथा कुतर्क से उपराम रहने के गुणों का भी ह्रास हो जाता है। संसार पर विचार ही शासन करते हैं अतः विचारों की श्रेष्ठता और परिपक्वता के लिए चिन्तन–मनन और अध्ययन की आवश्यकता होती है और इसके लिए एकान्त प्रियता आवश्यक हैं। जिन लोगों का लोगों के मनों पर शासन होता है उनके अपने मन बहुत विशाल, चित और विकारों के प्रभाव से ऊपर होते हैं। अतः संसार का हित इसी में है कि उस पर उत्तम रहे जिनके भीतर दिव्यात्माएं निवास करती हों और जो दिव्य लोक से आती एवं संसार में सुख और शान्ति की गंगा बहाकर दिव्य लोक को लौट जाती है।

तीर्थ क्या हैं?

संकलन–कृष्ण मुरारी– सभा कार्यालय अधीक्षक

महाभारत का युद्ध समाप्त हो चुका था। युधिष्ठिर का एकछत्र राज्य चारों ओर फैला हुआ था। एक दिन युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण महाराज से कहा, "भगवन्! इतना भयंकर युद्ध हमने किया, उसमें लाखों नर–नारियों का संहार हुआ, इससे मन बड़ा खिन्न सा रहता है। इसके परिमार्जन के लिए तीर्थ यात्रा पर जाने का विचार कर रहा हूं।"

श्रीकृष्ण ने उस समय तो कुछ नहीं कहा किन्तु उनको समझाने के लिए मन में उपाय सोच लिया और बोले, "ठीक है, आप तीर्थ यात्रा कर शान्ति प्राप्त करने का यत्न कीजिए और मेरी यह तुम्बी साथ ले जाइए, जिस स्थान पर भी आप स्नान करें, एक डुबकी इसको भी लगा लाइये। मैं भी साथ चलता, किन्तु मैं व्यस्त हूँ।"

धर्मराज तुम्बी लेकर भगवान से विदा लेकर चल दिये और घर जाकर अपनी तीर्थयात्रा पर भी निकल पड़े। जैसा उन्होंने वचन दिया था, तदनुसार जिस किसी तीर्थ पर भी गये उन्होंने तुम्बी को भी डुबकी लागई और जब वापस आये तो भगवान् से भेंट करने गये और उनकी तुम्बी उनको वापस करते हुए कहा, "लीजिये, यह रही आपकी पवित्र तुम्बी। मैंने प्रत्येक स्थान पर पवित्र जल में इसे स्नान कराया है।"

श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर का धन्यवाद किया और अपनी योजनानुसार उसी समय सबके समक्ष ही उन्होंने उस तुम्बी को चूरचूर करवाया। उन्होंने उसका चूर्ण बनवा लिया।

तुम्बी का चूर्ण बन जाने का बाद स्वयं श्रीकृष्ण ने अपने हाथों से वह चूर्ण पाण्डवों सहित उस समय उपस्थित सब लोगों को चखने के लिए दिया। लोगों ने सहर्ष लिया, समझते थे श्रीकृष्ण दे रहे हैं तो इसका कोई रहस्य होगा। किन्तु मुख में डालते ही सबके मुख कड़वे हो गये। स्वयं श्रीकृष्ण ने भी थोड़ा चूर्ण अपने मुंह में डाला और उसकी कड़वाहट अनुभव करके बोले, "यह तुम्बी भारत–भर की समस्त नदियों और पवित्र सरोवरों में स्नान करा कर लाई गयी है, अतः मैं सोचता था कि अत्यन्त पवित्र हो गयी होगी। किन्तु मैं देख रहा हूँ कि इसकी कड़वाहट तनिक–सी भी कम नहीं हुई है। आश्चर्य इतनी पवित्र करवाने के बाद भी यह तुंबी मीठी नहीं हुई। तब तो लगता है कि हमारा कड़वापन और मन की अशान्ति भी तीर्थ पर जाने में दूर नहीं हो सकती।

"हे पाण्डुपुत्र! अपनी जिस आत्मारूपी नदी में संयमरूप जल, सत्यरूप प्रवाह, दयारूप तरंगें और शील रूप कगार हैं, उसी में अवगाहन करो। बाह्य सरिताओं के जल से कभी अन्तरात्मा शुद्ध एवं पवित्र नहीं हो सकती।"

युधिष्ठिर अब तुम्बी का रहस्य समझे और मन की शान्ति के लिए उन्होंने वही उपाय किया जिसका व्याख्यान श्रीकृष्ण ने किया था।

कमरे में सन्नाटा छा गया

– हरीश कमार शास्त्री

सुबह–सुबह लान में टहलते हुए जगन्नाथ महापात्र के मन में द्वंद्व छिड़ा हुआ था। पत्नी के निधन के बाद वो सारा व्यापार बेटे को सौंपकर अपना समय किसी तरह घर के छोटे–छोटे कार्यों व पोते–पोती के साथ खेलने बतियाने में काट रहे थे, लेकिन जब से डॉक्डर ने उसे किसी भयानक रोग से संक्रमित होना बताया है, बेटे–बहू का व्यवहार उसके प्रति बदल गया है। डॉक्टर के यह कहने के बावजूद कि यह बीमारी इलाज जरूर है लेकिन छूत की नहीं, आप लोगों को अब इनका विशेष ध्यान रखना चाहिए, वे उनसे कन्नी काटने लगे हैं, बच्चों को उसने निकट तक नहीं फटकने दिया जाता। भोजन भी नौकर के हाथ कमरे में भिजवाया जाने लगा है, उसे अब अपनी मेहनत के बल पर खड़ा किया गया अपना साम्राज्य, बंगला, गाड़ी, नौकर, चाकर, बैंक बैलेंस आदि सब व्यर्थ लगने लगा है, टहलते–टहलते वे बेटे–बहू की मोटे परदे लगी हुई लान में खुलने वाली खिड़की के निकट से गुज़रे तो उनकी फुसफसाहट बातचीत में 'पिताजी' शब्द सुनकर वहीं आड़ में खड़े होकर उनकी बातचीत सुनने लगे।

बहू कह रही थी–" देखो, पिताजी की बीमारी चाहे छूत की न भी हो लेकिन मैं परिवार के स्वास्थ्य के मामले में कोई रिस्क नहीं लेना चाहती, तुम्हें उनको अच्छे से वृद्धाश्रम में भर्ती करवा देना चाहिए, रूपये–पैसे की तो कोई कमी है नहीं, और हम भी उनसे मिलने जाते रहेंगे।" सही कह रही हो, मैं आज ही उनसे बात करूंगा।" जगन्नाथ महापात्र के कान इसके आगे कुछ सुन नहीं सके, उनके घूमते हुए कदम शिथिल पड़ने लगे और वे कमरे में आकर निढ़ाल होकर बिस्तर पर पड़ गए। रात को भोजन के बाद बेटे ने जब नीची निगाहों से उनके कमरे में प्रवेश किया, वे एक दृढ़ निश्चय के साथ स्वयं को नई जिन्दगी के लिए तैयार कर चुके थे।

बेटे को देखकर चौंकने का अभिनय करते हुए बोले "आओ विमल, कहो आज इधर कैसे चले आए, कुछ परेशान से दिख रहे हो, क्या बात है"? जी, मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूं, सर झुकाए हुए ही विमल ने बुझे हुए से स्वर में कहा"। "मुझे भी तुमसे कुछ कहना है बेटा, मैं तुम्हें बुलाने ही वाला था, अच्छा हुआ तुम स्वयं आ गए, बेफिक्र होकर अपनी बात कहो..." पहले आप अपनी बात कहये पिताजी..." समीप ही पड़ी हुई कुर्सी पर बैठते हुए विमल बोला..." पहले आप अपनी बात कहिये पिताजी..." "बात यह है बेटे, कि डॉक्टर ने जब मेरी बीमारी खतरनाक बताई है तो मैं चाहता हूं कि मैं अपना शेष जीवनकाल अपने जैसे असहाय, बेसहारा और अक्षम बुजुर्गों के साथ व्यतीत करूं। कहते हुए जगन्नाथ महापात्र का गला रूंधने लगा। सुनते ही विमल मन ही मन खुशी से फूला न समाया पिता ने स्वयं आगे रहकर अपराध बाधा से मुक्त कर दिया और उसने पिता से कहा। "यह आप क्या कह रहे हैं पिताजी, आपको यहाँ रहने में क्या तकलीफ नहीं, लेकिन यह कहने में तकलीफ हो रही है कि तुम अब अपने रहने में कोई तकलीफ नहीं, लेकिन यह कहने में तकलीफ हो रही कि तुम अब अपने रहने की व्यवस्था अन्यत्र कर लो, मैंने इस बँगले को "वृद्धाश्रम" का रूप देने का निर्णय लिया है, ताकि अपनी यादों और जड़ों से जुड़ा रहकर ज़िदगी जी सकूँ... और हाँ, तुम भी कुछ कहना चाहते थे न! .... कमरे में एक सन्नाटा छा गया।

एकदा

एक राज्य का राजा बहुत ही कर्तव्यनिष्ठ, वीर और परोपकारी था। उस राज्य में एक विद्वान साधु पधारे। राजा ने साधु की बहुत सेवा की। साधु ने राजा को आशीर्वाद दिया और राज्य की समृद्धि के लिए उपाय बताया कि महल के उत्तर स्थित मन्दिर के परिसर में एक पक्का तालाब बना कर उसे पूर्णिमा की रात्रि दूध से भर दो। राजा ने साधु की बात मान कर तालाब बनवा दिया फिर राज्य की जनता को आदेश दिया कि प्रत्येक परिवार से एक घड़ा दूध पूर्णिमा की रात्रि दूध से भर दो। राजा ने साधु की बात मान कर तालाब बनवा दिया फिर राज्य की जनता को आदेश दिया कि प्रत्येक परिवार से एक घड़ा पानी डाल देंगे कौन जान पायेगा। कुछ ने सोचा कि राजा लगान–पोत सिंचाई सब कुछ तो लेता है हम दूध क्यों डालने जायें। उधर राजा को पूर्ण विश्वास था कि उसकी प्रजा सुबह तक तालाब को दूध से भर देगी। किन्तु सुबह जब राजा ने देखा तो उसका तालाब दूध के बजाय पानी से भरा था।

प्रवेश सूचना–

गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार)

गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के अन्तर्गत स्वामी दर्शनानन्द उच्चतर माध्यमिक विद्यालय जो कक्षा ६ से कक्षा १० तक के लिए उत्तराखण्ड विद्यालय जो कक्षा ६ से कक्षा १० तक के लिए उत्तराखण्ड विद्यालयी शिक्षा शिक्षा परिषद रामनगर, नैनीताल द्वारा मान्यता प्राप्त है का नवीन सत्र अप्रैल २०१८ से प्रारम्भ होने जा रहा है। आवासीय छात्रों का कक्षा ६ से १० तक प्रवेश प्रारम्भ है।

यहां गुरूकुलीय शिक्षा पद्धति के साथ छात्रों को आधुनिक विषयों की शिक्षा शुद्ध स्वास्थ्यप्रद जलवायु में प्रदान की जाती है। शिक्षा के साथ छात्रों के लिए खेल एवं योगासन की भी उचित व्यवस्था है। आधुनिक जिम, खेल मैदान आदि सभी संस्था परिसर में ही उपलब्ध है। प्रवेश हेतु यथाशीघ्र सम्पर्क करें।

क्षेत्रपाल सिंह चौहान	असीम कुमार	पं. हेमन्त तिवारी
मुख्याधिष्ठाता/प्रबन्धक	प्रधानाचार्य	आचार्य
६४१५१५६६३	७५७६१८४०४६	७५७६४६६८३८

कन्या गुरूकुल महाविद्यालय (सासनी) हाथरस

नवीन प्रवेश प्रारम्भ सत्र–2018–19

नोट : कन्या गुरूकुल में प्रवेश परीक्षा के आधार पर लिया जायेगा।

१. प्रवेश कक्षा शिशु (नर्सरी) से कक्षा नवीं तक किसी भी कक्षा में लिया जा सकता है।
२. कक्षा ११ वीं और १३वीं (उत्तरमाध्यमा, विद्याविनोद, शास्त्री, विद्यालंकार) कक्षा में भी प्रवेश लिया जा सकता है।
३. प्रवेश के समय छात्रा के पासपोर्ट साइज ३ रंगीन फोटो तथा छात्रा से मिलने वाले किन्हीं चार व्यक्तियों के पासपोर्ट साइज रंगीन फोटो, अंकतालिका, काउण्टर साइन टी.सी., पहचान पत्र, आधार कार्ड साथ लेकर आये।
४. मान्यता– गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।
५. नवीं से बारहवीं कक्षा तक गुरूकुल कांगड़ी के पाठ्यक्रम में (N.C.E.R.T.) का पाठ्यक्र संचालित है।
६. नवीं से बारहवीं कक्षा तक कला वर्ग के साथ–साथ विज्ञान वर्ग का भी पाठ्यक्रम संचालित है।
७. अतिरिक्त प्रशिक्षण–
१. संगीत (गायन, वादन, तबला) में प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद की परीक्षायें (जूनियर डिप्लोमा से लेकर प्रभाकर तक) संचालित हैं।
२. खेलकूद तथा शारीरिक प्रशिक्षण (जूड़ों–कराटे, बैडमिंटन, खो–खो,)।
३. योग प्रशिक्षण।

कन्या गुरूकुल अलीगढ़, आगरा मार्ग पर सासनी–हाथरस के मध्य स्थित है।

सम्पर्क सूत्र– ०६२५८०४०११६, ०८००६३४०५८३, ०६४५८४८०७८१, ०६६२७६६१६२२, ०७८३०२८६३७६।

ईमेल– kanyagurkulmhv.hathras@gmail.com& kgpiti2007@gmail.com

बेबसाइट– kanyagurukul.in

डा0 पवित्रा विद्यालंकार मुख्याधिष्ठात्री एवं आचार्या

"आर्य समाज श्रृंगार नगर में 101 कुण्डीय यज्ञ

नव संवत्सर के उपलक्ष्य में चैत्र शुक्ला प्रतिपदा, वैक्रमाब्द २०७५, रविवार, १८ मार्च, २०१८ को आर्य समाज श्रंगारनगर, लखनऊ द्वारा निकट वर्ती पार्क में १०१ कुण्डीय यज्ञ कराया गया।

आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक' सामूहिक यज्ञ के संचालक और पं० गिरजेश कुमार सह–संचालक रहे। प्रत्येक वर्ष की भांति दो आर्य महिलाओं और दो पुरूषों को सम्मानित किया गया। स्वामी वीरेन्द्र परिव्राजक (डालीगंज), श्री अमृत प्रकाश (रायबरेली रोड), श्रीमती ऊषा गुप्ता (सदर), श्रीमती करूणा मोहन (लालबाग) महात्मा प्रेम मुनि जी ने आर्य पुरूषों और महापौर श्रीमती संयुक्ता भाटिया ने आर्य महिलाओं को शाल ओढ़कर मार्ल्यापण किया। तदनन्तर जल–पाल कराकर कार्यक्रम सम्पन्न किया गया।

–राकेश माहना, मन्त्री

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७४०२१६२, व्यवस्थापक- ६३२०६२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
....
....

साभार – घरेलू औषधियाँ :–

सर्प काटे पर उपचार–

१. केले के पेड़ के छिलके का रस २० ग्राम १०–१२ काली मिर्चों के साथ सर्प–काटे हुए व्यक्ति को पिलाने से अवश्य और आश्चर्यजनक लाभ होता है।

पहली मात्रा में लाभ न हो तो एक घण्टे पश्चात् दूसरी, फिर दो–दो घण्टे पश्चात् दें। कूटे हुए छिलके को पीसकर दंश–स्थान पर बाँध दें।

२. जमालगोटा की साबुत गिरी को नींबू के रस में ७ दिन तक भिगोकर छाया में सुखाएँ और फिर उसे सुर्मे के समान बारीक पीसकर रख लें। सर्प काटने पर यदि रोगी बेहोश भी हो गया हो तब भी सलाई से इस सुर्मे को उसकी आँख में लगा दें।

रोगी रोएगा, चीखेगा, चिल्लाएगा, कष्ट होगा, आँखे सूज जाएंगी, परन्तु चिन्ता न करें, सर्प–विष उतर जाएगा। विष उतर जाने पर आँखों में गोघृत लगाएँ।

३. अरण्ड की कोंपलें १० ग्राम, कालीमिर्च ५ नग–दोनों को पानी में पीसकर पिला दें। इससे वमन होगा और कफ निकलेगा। पुनः इसी प्रकार पिलाएं। दो बार में ही आराम हो जाता है। यदि कसर रह जाए [illegible] सकते हैं। तत्काल लाभ होगा।

४. कुचले को नींबू के रस में पीसकर चम्मच [illegible] गल [illegible] डालें। फिर सिर और शरीर पर पारा लगा–लगाकर मलें। तुरन्त आराम होगा। कब्र के लिए तैयार रोगी भी ठीक हो जाएगा।

५. सर्प के दंशित रोगी को रीठे का छिलका तब तक खिलाते रहें जब तक उसे कड़वा न लगे। भयंकर से भयंकर विषधर सर्प द्वारा काटा रोगी भी बच जाता है। यदि रोगी बेहोश हो गया है, दांत भिंच गये हैं तो रीठे के छलकों को पानी में डाल और उन्हें मथकर रीठे का पानी तैयार करें। यह पानी रोगी की नाक और मुंह में डालें। मुख खुल जाएगा। फिर रीठे का पानी पिलाएं। वमन हो–होकर सारा विष बाहर निकल जाएगा।

६. हुक्के का सड़ा हुआ पानी २० ग्राम, केले के डण्ठल का रस २० ग्राम–दोनों को मिलाकर १–१ घण्टे पश्चात् अब तक पिलाते रहें जब तक रोगी होश में न आ जाए। रोगी को सोने न दें। पानी के छींटे मारते रहें, नीम की [illegible] और लालमिर्च खिला–खिलाकर बीच–बीच में [illegible] परीक्षा भी करते रहें।

७. उसारे रेवन्द, रीठे के छिलके–दोनों १०–१० ग्राम लेकर बारीक पीस लें। आधा से एक ग्राम तक दवा घी के साथ २–२ घण्टे के अन्तर से दिन में तीन बार दें। चाहे कैसे भी सर्प ने काटा हो, एक ही दिन में आराम हो जाएगा।

८. कसौंदी के पत्ते गीले २० ग्राम (सूखे हो तो १० ग्राम, परन्तु बहुत पुराने न हों) और कालीमिर्च १२ नग पीसकर थोड़े से घी में मिलाकर पिला दें और कसौंदी के पत्तों को काटे हुए स्थान पर चीरा लगाकर बाँध दें। यह सर्प–दंश का शर्तिया इलाज है। किसी ने कहा है–

पात कसौंदी विष हरे, जड़ से साँप डरात।
फल से बाघ डरात है, फूल रतौंधी जात।।

९. बिच्छू और सर्प के दंश पर मदार–आक का दूध लगाने से विष उतर जाता है।

११. मदार की जड़ पानी में पीसकर पिलाने से साँप का विष उतर जाता है।

पृष्ठ ३ का शेष

महात्मा भक्तफूलसिंह....

अधिकारियों ने मना किया कि आत कार्य करते रहे और समाज सेवा भी आपको यह स्वीकार नहीं था अतः १६१६ में अपना समस्त चार्ज बरकत अली नाम के पटवारी को सौंप दिया। सम्भल का ग्राम में गोहत्या के लिए स्थान मुसलमानों ने बना लिया सरकार ने अनुमति दे दी आपने क्षेत्र के लोगों को एकत्रित किया और उसके विरूद्ध आन्दोलन कर दिया क्रुद्ध जनता को शान्त किया और बूचड़खाना बन्द करा दिया। लोगों ने आपके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की–

इरादे जब पाक होते हैं, सफलता चलकर आती है। चट्टाने थर थराती हैं और समुद्र रास्त देते हैं। इस घटना से आपकी छवि समाजसेवी नेता के रूप में प्रसिद्ध हो गई लेकिन विरोधियों ने सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया कि यह षड्यत्र सरकार पलटने का था अतः इसे देशद्रोह में बन्द किया जाये मुकदमा चला चौ० छोटूराम जी ने केश लड़ा और आपको निर्दोष सिद्धकर विजय प्राप्त की।

गुरूकुल की स्थापना ग्राम भैंसवाल में गुरूकुल खोलने की योजना लोगों ने आपकी तपस्या साधना दृढ़ संकल्प देखकर कहा कि हम भूमि के साथ पैसे भी देगें, सर्वत्र चर्चा का विषय हो गया और १५० बीघा जमीन पर १६१६ में गुरूकुल का शिलान्यास स्वामी श्रद्धानन्द जी के कर कमलों द्वारा सम्पन्न कराया। स्वामी जी दिल्ली से सोनीपत रेल द्वारा और वहां से १२ कोस की यात्रा अपार जनसमूह के साथ स्वामी जी ने पैदल ही पूरी की बैलगाड़ियों पर नहीं बैठे और क्षेत्र में उत्साह वर्धक उपदेश किया। अगले १६२० ज्येष्ठ मास में प्रथम वार्षिक उत्सव पर स्वामी जी की अपील पर अपार धन वर्षा हुई और भवन निर्माण कार्य हो गया भूमि का कार्य भी तपस्या से ही पूरा हुआ। गुरूकुल को केन्द्र बनाकर समाज सेवा के कार्य भी साथ–साथ करते रहे और अपनी साधना भी वानप्रस्थ आश्रम की दीक्षा प्राप्त कर ली विरोधियों को आत्मीय बनाना अपकी साधना थी मान्धरा में विशाल पंचायत करके सन् १६२५ में विवाह एवं मृत्यु भोज पर अनर्गल खर्च पर प्रतिबन्ध लगाया और सर्वसमाज के लिए हितकारी नियम बनाये तथा लागू करवायें गए।

बीघल ग्राम में चौपाल बनवाने के लिए प्रयास किया और सफल हुए। डबरपुर ग्राम के नेकीराम और भरतसिंह के भूमि विवाद को समाप्त कराया। उन्नीस दिन तक अनशन करके गोचर भूमि को छुड़वाया १६२८ में जीन्द जिले के ललतखेड़ा ग्रम में गौओं को घरों में देखकर दुःखी हुए और कहा कि जब तक गोचर हेतु भूमि सुरक्षित की। पलवल के तथा होडल के जाट मुसलमान हो गए थे तो वहां जाकर ११ दिन अनशन किया। और उन्हें पुनः हिन्दू (आर्य) बनाकर भोजन ग्रहण किया। इसी प्रकार जागसी ग्राम में २ परिवारों के विवाद में कत्ल हो गया था उस परिवार को मनाकर फैसला कराया औरा दोनों परिवार बचाये। रोहतक में गोरक्षा सम्मेलन किया उसमें मालवीय जी को काशी से बुलाकर सम्मानित किया।

सिरसा जॉटी ग्राम के नेकीराम की पुत्री को यवन ले गए थे उसे छुड़ाकर वापस सौंप दिया १६२६ में कन्या गुरूकुल खानपुर की स्थापना की जो आज प्रभु कृपा से भक्त फूलसिंह कन्या विश्वविद्यालय बन चुका है। दलितों के लिए कुंआ बनवाना, हैदराबाद सत्याग्रह समिति का अध्यक्ष बनना, मान–अपमान से ऊपर उठकर विरोधी की भी सेवा करना आपके जीवन की प्रसिद्ध घटनायें है १६४० में हैदराबाद के निजाम की तरह लोहास के नवाब ने अत्याचार प्रारम्भ कर दिये थे आर्य समाज का उत्सव नहीं होने देते थे भक्त फूलसिंह जी ने नवाब से वार्ता की और वह तैयार हो गया अप्रैल १६४१ को उत्सव निश्चित हुआ स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी पंजाब, समरसिंह वेदालंकार जी एवं म० नोनन्द सिंह जी भजनों पदेशक थे शोभायात्रा में पूज्य स्वामी जी नेतृत्व कर रहे थे भक्त फूलसिंह जी, वेदालंकार जी एवम् नोनन्द सिंह जी बाद में स्वामी नित्यानन्द जी के नाम से प्रसिद्ध हुए जलूस में नवाब के व्यक्तिओं ने आक्रमण कर दिया जो एक भयंकर रूप था मुख्य नेता बेहोश हो गए अपराधी बनाकर इलाज कराया भक्त फूलसिंह जी २ मास तक दिल्ली इरविन अस्पताल में रहे यह बलिदानी घटना आर्य समाज के इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है जो आज भी प्रेरणा प्रदान कर रहा है।

बलिदानी परम्परा–स्वामी श्रद्धानन्द जी की तरह ही जीवन जीने वाले और मृत्यु भी इसी परम्परा से आई तथा अमर बलिदानी... भक्त फूलसिंह प्रेरक समाज सेवी बन गए। बार–बार के अनशन एवं तपस्या से शरीर कृश हो गया था संस्थाओं का कार्यभार भी उत्त्राधिकारियों को सौंप दिया था १४ अगस्त १६४२ को रात्रि ६ बजे आप अपने भक्तों का साधन सिखा रहे थे ५ पवन घातक सिपाही वेश में एक बन्दूक २ पिस्तौल बैट्री हाथ में लेकर बोले कि यहां फौजी भगोड़े रखते हो तुम सरकार से गद्दारी करते हो भक्त जी ने कहा यह स्थान तो लड़कियों के पढ़ने का है यहां कोई भगोड़ा नहीं है आप हम पर पूर्ण विश्वास करें। इतना कहने पर उन्होंने पिस्तौल के ३ फायर किये औरा बलिदानी परम्पराओं में अमर हो गए स्वामी श्रद्धानन्द जी को भी ३ गोलियां लगी थी वे भी कृशकाय हो गए थे दोनों के जीवनदर्शन–समाज सेवा कार्य एवं गुरूकुलीय शिक्षार्थ पुरुषार्थ तथा बलिदान, अदम्य उत्साह, लम्बाई, धैर्य, बहुत अंशो में सभ्यता दिखाई देती है। आर्य समाज का इतिहास बलिदानी परम्परा से थी पूर्व है। भक्त फूलसिंह जी की तरह आर्य समाज के कार्यकर्त्ता–अधिकारी और सभासद सदस्य सभी के लिए चिन्तनीय क्षण हैं उनके अधूरे कार्य को पूर्ण करने की आज महती आवश्यकता है। प्रत्येक आर्य के लिए एक चुनैती पूर्ण समाधान भी है कि जब ऐसे जीवन से भी आत्म मन्थन, आत्म चिन्तन, आत्मशोधन, द्वारा इतिहास के प्रेरणा पुंच के रूप में आदर्श हो सकते हैं तो आपको तो शीघ्र सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रभु संकल्पशक्ति प्रदान करें।

मैं इतिहास पुरुष वीर बलिदानी को सादर नमन करता हूँ।

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रुप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।